संस्करण - 3 अंक - 4 अक्टूबर 2023

प्रज्ञाम्बु

cGanga
गंगा नदी घाटी प्रबंधन एवं अध्ययन केंद्र

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर द्वारा संचालित गंगा नदी घाटी प्रबंधन एवं अध्ययन केंद्र (cGanga) की इस त्रैमासिक पत्रिका का उद्देश्य जल और नदी पुनरुद्धार एवं संरक्षण के प्रबंधन से संबंधित विभिन्न विषयों पर देश-विदेश से उपलब्ध पारंपरिक ज्ञान एवं विज्ञान के समन्वय पर आधारित जानकारी संबंधित संस्थाओं एवं नागरिकों तक पहुचाना है।

शहर, नदियां और हम

भूमि, नदियां, पर्वत, पठार और मैदानों का समावेश और संतुलन हमारी धरती को परिपूर्ण और सुंदर बनाता है। इस धरती पर स्थापित हर तंत्र एक–दूसरे से अंर्तसंबंधित है। आधुनिक युग का कोई भी परितंत्र मानवीय हस्तक्षेप से अछूता नहीं है। जलीय तंत्र जैसे नदियों पर मानवीय हस्तक्षेप का परिणाम आज स्पष्ट नजर आने लगा है और इस तंत्र की पुर्नबहाली के लिए आवश्यक है कि भूमि पर स्थापित विविध परितंत्रों का जलीय तंत्र के साथ साम्य और संतुलन हो। प्रज्ञाम्बु के इस अंक में हम भूमि और जल संसाधनों के आपसी संबंधों पर चर्चा करेंगे और विभिन्न उदाहरणों और विश्लेषणों के द्वारा यह जानने का प्रयास करेंगे कि कैसे हम भूमि पर अपने सामुदायिक व्यवहार को अनुशासित और संयमित बनाकर नदियों को संरक्षित कर सकते हैं और मानवीय गलतियों के परिणामस्वरूप प्रकट होने वाली प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षित रह सकते हैं।

एक प्राचीन कहावत के अनुसार मनुष्य को ऐसे स्थान पर निवास करना चाहिए जहां नदी,राजा, वैद्य, व्यापारी और विद्वान पुरूष रहते हो। विश्व की सभी सभ्यताएं नदियों के किनारे विकसित हुई। सभ्यता विकसित हुई तो इंसान की बसाहटें ग्राम और नगर में परिवर्तित हुई। नगर की जरूरतों को पूरी करने के लिए जंगल कटने लगे, खेत, उद्योग बनने लगे। आवागमन सुगम हो इसलिए नदियों पर पुल बन गए। सालभर पानी मिलता रहे इसलिए नदियों को बांध बनाकर बांध दिया गया। नगर फैलते गए और नदियां सिकुडती गई। हमारी दुनिया में राजा, वैद्य, व्यापारी और विद्वान सब बढ़ते रहे लेकिन नदियां सिमटती और सूखती रही। अब हालात यह है कि मानव सभ्यता का कल, इस बात पर निर्भर करेगा कि आज हम अपनी नदियों को स्वस्थ और जीवित रखने के लिए क्या कर रहे हैं।

आमतौर पर जब जिक्र नदियों की सफाई या संरक्षण का होता है तो हमारे मस्तिष्क में एक जलधारा की छवि उभरती है। हम में से कुछ लोग नदी को स्वच्छ बनाने की खातिर, नदी के घाट पर होने वाले सफाई अभियानों में भागीदारी भी करते हैं। नदियों को स्वस्थ और स्वच्छ बनाने के लिए इतना काफी नहीं है। नदी की मुख्यधारा उसके शरीर का बाह्य स्वरूप मात्र है, असल में नदी और नदी का बेसिन मिलकर नदी को पूर्ण बनाते हैं। नदी के बेसिन में हमारी गतिविधियों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव नदी पर होता है। यदि नदी के बेसिन में ऐसी गतिविधियां जारी रहेगी, जिससे नदी के जलग्रहण में, निर्मलता में, अविरलता में या नदी के लिए आवश्यक संसाधनों में गिरावट आती रहेगी तब घाटों की सफाई करने, उन्हें सुंदर बनाने या उस पर रोशनी करने से नदी को कोई लाभ नहीं होगा। आईए कुछ उदाहरणों से नदी और नदी के बेसिन यानी जलसंसाधन और भू–संसाधन के संबंधों को समझने का प्रयास करते हैं।

इस तथ्य से हम परिचित हैं कि हमारी नदियों के समक्ष कई चुनौतियां हैं। नदियां सूख रही हैं और प्रदूषण से जूझ रही हैं। दूसरी ओर भूमि की बात करे तो देश में बंजर भूमि का प्रतिशत बढ़ रहा है, वर्ष 2011 से 2013 के बीच स्पेस अप्लीकेशन सेंटर द्वारा किये गए एक रिसर्च में यह तथ्य सामने आया कि देश की 96.4 मिलियन हेक्टेयर भूमि, जो कि कुल भौगोलिक क्षेत्र का 29.37 प्रतिशत है, रेगिस्तानीकरण और बंजर होने की ओर अग्रसर है। दूसरी ओर 2019 में ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा जारी की गई सूचना के अनुसार देश के 11 राज्यों में बंजर जमीन का प्रतिशत बढ़ रहा है। इन राज्यों में जम्मू और कश्मीर (तत्कालीन), असम, तेलंगाना, उडीसा, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र भी शामिल हैं। असल में यह महज सूचना नहीं वरन् भविष्य में खाद्य सुरक्षा पर मंड़रा रहे खतरे की चेतावनी है। अब इसी समस्या के तीसरे पहलू की ओर ध्यान देते हैं, यह है मृदा में नमी (मॉईश्चर) की कमी।

मृदा की ऊपरी पर्त में नमी का तात्पर्य मृदा के कणों के सूक्ष्म छिद्रों और रिक्त स्थान में संचित जल है। यह जल आंखों से दिखाई नहीं देता किंतु इसकी मात्रा को मापा जा सकता है। संचित जल के कारण पैदा हुई नमी मृदा को उर्वरा बनाती है। यह नमी पौधों की वृद्धि और पौधों द्वारा पोषक तत्वों के अवशोषण के लिए आवश्यक है। मृदा में सूक्ष्मजैविक गतिविधियां और अन्य जैव रासायनिक प्रक्रियाओं के पूर्ण होने के लिए भी यह नमी आवश्यक है (चित्र 1.)। बीते दो दशकों में ना केवल भारत बल्कि वैश्विक स्तर पर मृदा की नमी में कमी की समस्या उभरी है, अमेरिका, ऑस्ट्रलिया और चीन की मिट्टी में नमी में भारी गिरावट दर्ज की गई है। मृदा में नमी की कमी होने से पौधों में पोषक तत्वों का अवशोषण प्रभावित होता है लिहाजा फसलों की गुणवत्ता घटती है और धीरे–धीरे भूमि बंजर होने लगती है। मृदा में नमी की कमी के कारण सिंचाई के लिए अधिक जल की आवश्यकता होती है। नमी के रूप में मृदा में संचित जल भी एक अदृश्य जलसंसाधन की तरह है। अफसोस कि

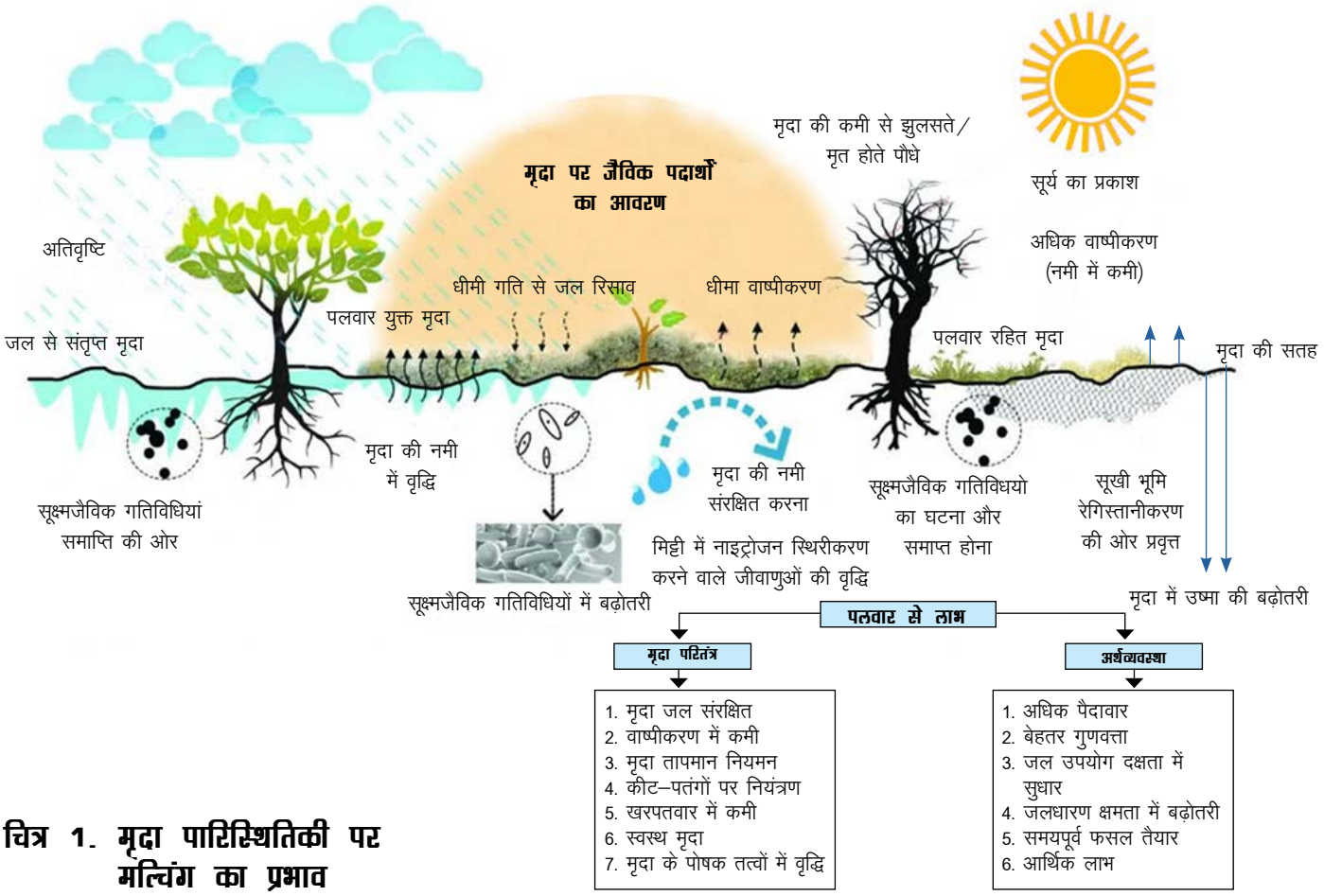

चित्र 1. मृदा पारिस्थितिकी पर मल्चिंग का प्रभाव

हम ने प्रकृति के कई अन्य महत्वपूर्ण घटकों की तरह ही इस जलसंसाधन की अनदेखी की, जिसके गंभीर परिणाम का असर उपज पर पड़ रहा है और आने वाले समय में और अधिक देखने को मिलेगा।

मृदा में नमी के कम होने के लिए भी कई कारण जिम्मेदार है, जिनमें कुछ मानवीय त्रुटियों से संबंधित हैं। मसलन रासायनिक खाद और उर्वरकों का प्रयोग मनमाने तरीके से करने से मृदा की लवणता बढ़ती है और जब मृदा में लवणता (खारापन) बढ़ती है तो मृदा की नमी कम होती है। नालों की अनदेखी, नालों पर अवैध निर्माण आदि की वजह से पानी के आवागमन के मार्ग अवरूद्ध हुए है, जिसके कारण जलभराव की समस्या उपजी है। जब पानी का आवागमन सही प्रकार से नहीं होता तब पानी के लवण मृदा में ठहर जाते हैं और मृदा की लवणता को बढ़ाते हैं, जैसे–जैसे मृदा की लवणता बढ़ती है, नमी कम होती है, नमी कम होने से मृदा की सूक्ष्मजैविक गतिविधियां कम होने लगती है। जिससे एक ओर फसलों की गुणवत्ता घटती है और धीरे–धीरे उक्त भूमि बंजर होने लगती है। इसी परिघटना का एक और गंभीर प्रभाव है, मृदा की नमी कम होने से कार्बन अनुक्रमण (कार्बन सीक्यूस्टरेशन) की दर घट जाती है। कार्बन अनुक्रमण अर्थात् भूमि में कार्बन की वापसी। कार्बन की प्रचुरता भूमि की उर्वरकता को बढ़ा देती है जब कार्बन अनुक्रमण की दर घटती है तो भूमि की उर्वरकता भी कम होती है। कार्बन अनुक्रमण की दर घटने का अर्थ है कार्बनचक्र का असंतुलन। गौरतलब है कि महासागरों के बाद मृदा कार्बन की सबसे बड़ी संचयनकर्ता है। यदि मृदा की कार्बन संचयन क्षमता में गिरावट आई तो इसके भीषण परिणाम सामने आएंगे।

ऐसे में स्वभाविक रूप से यह प्रश्न सामने आता है कि मृदा में नमी को किस तरह बढ़ाया जाए?

मृदा में नमी की बहाली का एक आसान तरीका है खेतों में पलवार (मल्चिंग) लगाना। कृषि अपशिष्ट जैसे सूखी पत्तियों, चावल का भूसा, लकड़ी का बुरादा, घास आदि का आवरण खेतों में बिछाया जाता है। इस तरह के आवरण की वजह से सिंचाई के पानी की वाष्पीकरण द्वारा हानि नहीं होती और मृदा में नमी बनी रहती है। हमारे देश में कृषि अपशिष्ट के उपयोग की दिशा में कई नवाचारों पर काम जारी है। कही अपशिष्ट को ऊर्जा में तब्दील किया जा रहा है तो कहीं ईंधन में। कृषि अपशिष्ट का सर्वश्रेष्ठ उपयोग खेतों में पलवार बनाना है क्योंकि अपशिष्ट के अपघटन से मृदा के पोषक तत्व दोबारा मृदा में मिल जाते हैं, पानी की हानि रूकती है और सिंचाई के लिए कम जल की आवश्यकता होती है साथ ही मृदा में सूक्ष्मजैविक गतिविधियां भी बढ़ती हैं, जो मृदा के स्वास्थ्य और उर्वरकता को बनाएं रखने के लिए बहुत जरूरी है। इसके अलावा पराली जलाने की प्रक्रिया को पूरी तरह बंद करना भी बेहद आवश्यक है क्योंकि पराली जलाने से एक ओर वायु प्रदूषण बढ़ता है, दूसरी ओर मृदा की नमी घटती है और सूक्ष्मजीवों का खात्मा हो जाता है।

नदी और भूमि के अंर्तसंबंधों को समझने के लिए हमें कई पहलूओं को विस्तार से समझना होगा जैसे भूमि के उपयोग का तरीका।

भूमि उपयोग में परिवर्तन

बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पहला समझौता भू–उपयोग में होता है। आवासीय सुविधाओं के लिए घास के मैदान, जंगल, चारवाह क्षेत्र और यहां तक कि छोटे तालाबों और झीलों

में भराव कर उन पर बसाहटें बसाई जाती है। कभी वेटलैंड और जंगलों को कृषि भूमि में परिवर्तित कर दिया जाता है। जब छोटे तालाब, झीलों या मौसमी धाराओं को समाप्त किया जाता है तो एक ओर भूमि के अंदरूनी मार्गों से नदियों तक पहुंचने वाले जल की मात्रा में गिरावट आती है और दूसरी हर छोटी–बड़ी जरूरत के लिए बड़ी नदियों पर निर्भरता बढ़ती है। यानी नदियों से ज्यादा जल लिया जाता है और बदले में कम जल नदियों तक पहुंचता है। जब जंगल और मैदान रहवासी क्षेत्र में बदल जाते हैं, तो भूमि द्वारा वर्षाजल की अवशोषण दर भी कम हो जाती है। दूसरी ओर नई बसाहटों से निकलने वाले ठोस और तरल अपशिष्ट का प्रबंधन और निस्तारण यदि सही प्रकार से ना हो तो दोनों किस्म का कचरा हमारे जलस्रोतों के समक्ष चुनौतियों को बढ़ा देता है। भूमि उपयोग में परिवर्तन का एक उदाहरण है चेन्नई का पल्लीकरनाई वेटलैंड। 50 वर्ष पूर्व यह वेटलैंड 6000 हेक्टेयर में फैला था, महज 50 सालों में विविध कारणों से भू–उपयोग में परिवर्तन के चलते यह 600 हेक्टेयर में सिमट गया। चेन्नई जैसे महानगर में एक प्रमुख वेटलैंड के इस तरह से सिकुडने का कारण हैं, शहरीकरण का विस्तार, गैरयोजनाबद्ध ढ़ंग से किया गया विकास कार्य, अवैध निर्माण और अतिक्रमण। इन सभी को 2015 में चेन्नई की बाढ़ का कारण बताया जाता है। जिसके चलते शहरवासियों को बहुत परेशानियों का सामना करना पड़ा था। तमिलनाडु की अन्य झीले भी अपने मूल आकार की तुलना में सिमट चुकी है। तमिलनाडु की वल्लीवक्कम अम्मातुर झील अपने मूल आकार की तुलना में 80 प्रतिशत तक सिमट गई है। कही निर्माण कार्यों के चलते जलस्रोतों में भराव कर दिया गया तो कही उन पर अवैध अतिक्रमण किया गया। कही जलस्रोतों तक जल पहुंचने के मार्ग ही बाधित कर दिये। इसी तरह के हालात अन्य महानगरों जैसे बेंगलुरू, अहमदाबाद और हैदराबाद जैसे शहरों में भी देखने को मिले हैं। जब महानगरों में यह हालात है तो छोटे शहरों और कस्बों के बारे में सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। कमोबेश यह हाल कश्मीर के वेटलैंड्स का भी हुआ, 1969 तक जो वैटलेंडस 18.75 वर्ग किलोमीटर में फैले थे, वे 2008 में घटकर महज 13 वर्गकिमी में सिकुड़ चुके थे। वेटलैंड्स के क्षेत्रफल में कमी आने के कारण इन वेटलैंड्स पर पाई जाने वाली कुछ मूलभूत वानस्पतिक प्रजातियां लुप्तप्राय हो गई। इसी तरह केरल के मध्यक्षेत्र में स्थित कुट्टानाड वेटलैंड और वेंबानाड झील अपने अस्तित्व को बनाए रखने की चुनौती से जूझ रहे हैं। गौरतलब है कि कुट्टानाड वेटलैंड और वेंबानाड झील पश्चिम घाट का महत्वपूर्ण जैव परितंत्र है।

अंतर्राष्ट्रीय कृषि उपज शोध संस्थान द्वारा जारी की गई एक शोध रिपोर्ट के मुताबिक हैदराबाद में 12535 हेक्टेयर के भूमिगत जलस्रोत बीते 11 वर्षों में 34.5 प्रतिशत तक घट चुके हैं। शोधकर्ताओं की माने तो भूमि के संसाधन के रूप में यह बहुत बड़ी क्षति है जिसका प्रतिकूल प्रभाव भविष्य में शहर के मौसम पर दिखाई देगा। जब भूजल का स्तर नीचे गिरता है तो शहरों की आवश्यकता पूरी करने के लिए क्षेत्र की किसी बड़ी नदी पर दबाव आता है और विभिन्न चरणों में सैकड़ों किमी दूर तक पेयजल आपूर्ति करवाई जाती है, जिसकी लागत स्थानीय संसाधन से जल उपलब्ध करवाने की तुलना में कही अधिक होती है।

प्रज्ञास्रु के पिछले अंकों में हमने इस विषय पर विमर्श किया था कि जब घरेलू अपशिष्ट सही तरह से उपचारित हुए बगैर ही नदियों तक पहुंच जाता है तो नदियों में जलीय वनस्पतियों की वृद्धि को उत्प्रेरित करता है। वनस्पतियों की अवांछित वृद्धि की वजह से नदियां उथली होती है और मानसून के समय जब सहायक नदियों, नालों से अतिरिक्त जल मुख्यनदी तक पहुंचता है तो गहराई कम होने की वजह से जल्दी बाढ़ आने का खतरा बढ़ जाता है। इसी तरह लोग व्यवसायिक लाभ के लिए नदियों के किनारे अनाज की खेती करते है, फसल की जड़े मिट्टी को जकड़कर रखती है, इसकी वजह से जिस गाद और मिट्टी को नदी के वेग के साथ बह जाना चाहिए था या तलहटी में जमा होना था, वह नदी के किनारे ही जमा रहती है। इसकी वजह से धीरे–धीरे नदियों की चौडाई कम होती है, चौड़ाई कम होने की वजह से भी बाढ़ जैसी विपदाओं का खतरा बढ़ता है।

बाढ़ से निढ़ाल शहर

इस मानसून में दिल्ली ने भीषण बरसात का सामना किया, जब एक ही दिन में दिल्ली में 153 मिमी बरसात दर्ज की गई। वर्ष 1982 के बाद दिल्ली में एक दिन में दर्ज की गई यह अब तक की सबसे अधिक बरसात थी। दिल्ली ही

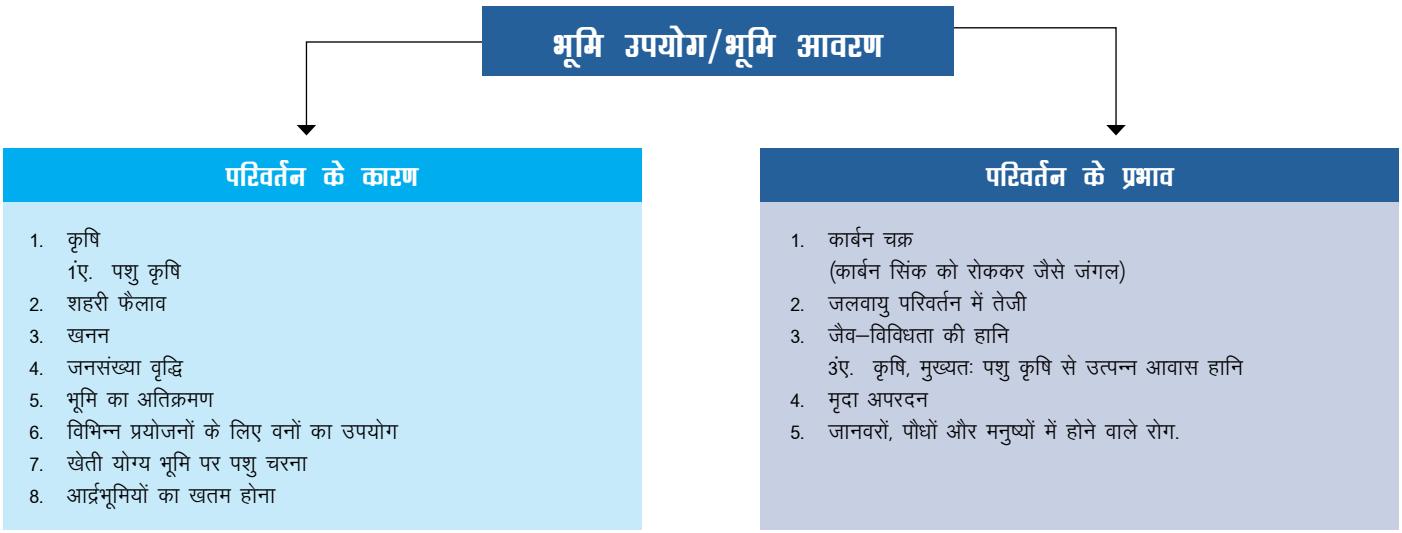

चित्र 2. भूमि उपयोग भूमि आवरण परिवर्तन के कारण एवं प्रभाव

नहीं पंजाब, हरियाणा और हिमाचल प्रदेश में हुई तेज बरसात के चलते सतलज, रावी, बेंस और यमुना नदी में खतरे के निशान से ऊपर पानी बहने लगा और बाढ़ की स्थिति निर्मित हुई। यमुना नदी का जलस्तर 208.66 मीटर तक पहुंच गया,जो कि बीते 60 वर्षों का अधिकतम रिकॉर्ड है। इस स्थिति के कारण 41 हजार लोग प्रभावित हुए और बड़ी संख्या में जान–माल और सार्वजनिक संपत्ति का नुकसान हुआ। इस भीषण बरसात का कारण मानसून की राह में पश्चिम दिशा से उठे अवरोध को बताया गया। दूसरी ओर इस विकट परिस्थिति के लिए जलवायु परिवर्तन को भी दोषी ठहराया गया। प्राकृतिक आपदाओं जैसे बादल फटना, सूखा पड़ जाना, बाढ़ आदि के लिए जलवायु परिवर्तन को जिम्मेदार बताया जा सकता है लेकिन मौसम और जलवायु के परिवर्तन को जिम्मेदार बताकर हम अपने उत्तरदायित्व से मुंह नहीं मोड़ सकते। जनजीवन के अस्त–व्यस्त होने की कुछ वजह नदी और नदी बेसिन प्रबंधन की कमियां भी हैं, जिन्हें हमें स्वीकार करना होगा।

दिल्ली की बाढ़ के कारणों में एक कारण यमुना की सहायक नदी हिंडन की उपेक्षा भी हैं। जानकारों की माने तो दिल्ली से लगे हुए इलाकों में हिंडन की चौड़ाई और गहराई बहुत कम हो चुकी है। दिल्ली से लगे गाजियाबाद में जलकुंभी के अतिक्रमण के कारण हिंडन की प्राकृतिक गहराई काफी कम हो गई है। बारिश में जब अतिरिक्त जल हिंडन में पहुंचा तो प्राकृतिक रूप से यह जलराशि हिंडन को समृद्ध बना सकती थी लेकिन नदी उथली होने की वजह से यह हिंडन को समृद्ध तो नहीं बना सकती इसके उलट यमुना की बाढ़ के कारणों में एक और कारण जुड़ गया। इसी तरह नालों की उपेक्षा भी शहरी बाढ़ का एक कारण है। नाले जल आवागमन का वो मार्ग हैं, जो बारिश में पानी का प्रबंधन करते थे। ना केवल दिल्ली बल्कि चीन के बीजिंग शहर में बाढ़ से हुई तबाही का एक कारण शहरी नालों की उपेक्षा है।

जलवायु परिवर्तन पर काम करने वाली संस्था आईपीसीसी (इंटरगर्वनमेंटल पैनल फॉर क्लाईमेट चेंज) और भारतीय उष्णदेशीय मौसम विज्ञान संस्थान के वैज्ञानिकों के अनुसार भविष्य में ऐसी घटनाओं (बाढ़, बादल फटना, असमय ओले गिरना, मौसम में परिवर्तन) की पुनरावृत्ति बढ़ेगी। हमें अपने शहरों का आधारभूत विकास इस तरह से करना होगा कि हमारे शहर इस तरह की चुनौती का समाना करने के लिए तैयार रहे।

दिल्ली की बाढ़ के मामले में बात करे तो दिल्ली का ड्रेनेज सिस्टम वर्ष 1976 में तैयार हुआ था। उसके बाद से शहर का बहुत विस्तार हुआ। शहर के भीतर और बाहर अनगिनत नई कॉलोनियां बनी और जनसंख्या भी कई गुना बढ़ गई। अगर कुछ नहीं बदला तो वह था, शहर का ड्रेनेज सिस्टम। अचानक आई आपदा के समय यह ड्रेनेज सिस्टम पानी को शहर से बाहर निकालने में नाकामयाब साबित हुआ और बारिश और बाढ़ का पानी शहर के कई इलाकों में जमा हो गया।

दिल्ली में हुई इस त्रासदी का दूसरा कारण है बाढ़कृत मैदानों (फ्लडप्लेन) जिन्हें सामान्य भाषा में कछार कहा जाता है पर निर्माण होना। बाढ़कृत मैदान नदी से सटे उन इलाकों को कहते हैं, जो इलाके जलबहुलता या बरसाती समय में जलमग्न हो जाते हैं। सैद्धांतिक रूप से मैदानी इलाको में नदी के तटबंधों से पांच किलोमीटर की दूरी तक निर्माण कार्य नहीं किया जाना चाहिए। यह प्रतिबंध बाढ़ की संभावित स्थिति में अतिरिक्त जल के प्रबंधन के लिए ही प्रस्तावित किया गया है साथ ही इस तरह का निर्माण ना कर के, बाढ़ की स्थिति में संपत्ति के नुकसान को टाला जा सकता है। ना केवल दिल्ली वरन अन्य शहरों में भी इस निर्देश का पालन नहीं किया गया है। जब कछार पर अवैध निर्माण होता है तो अतिरिक्त जल नदी में पहुंचने की स्थिति में उस जल का प्रबंधन कठिन हो जाता है। अतिरिक्त जल की वजह से प्राकृतिक रूप से नदी की चौड़ाई बढ़ना चाहिए, जो निर्माण के चलते नहीं बढ़ सकती। ऐसे में अतिरिक्त और वेग जलराशि के साथ निचले इलाकों में भीषण बाढ़ की स्थिति निर्मित होती है। दोनों ही मामले में नुकसान मनुष्य का होता है। नदी के कछार में निर्माण कार्य होने की वजह से तटीय इलाकों की मृदा की जल अवशोषण क्षमता भी कम हो जाती है। दिल्ली में बाढ़कृत मैदान या कछार का इलाका सैद्धांतिक रूप से 10 हजार हेक्टेयर का है, जबकि यमुना नदी की लंबाई 54 किमी है। यदि यमुना के कछार अतिक्रमण और अवैध निर्माण से मुक्त होते तो संभव है कि बाढ़ से इतनी बड़ी तादाद में जन–धन की हानि नहीं होती। दिल्ली ने सन् 2010 और सन् 2014 में भी बाढ़ का संकट झेला है। दिल्ली के संदर्भ में हरित न्यायालय ने भी बाढ़ग्रस्त मैदानों पर निर्माण कार्य ना करने के स्पष्ट दिशा–निर्देश दिये है लेकिन यमुना के तटबंधों से 5 किमी के दायरे में कई महत्वपूर्ण और सार्वजनिक महत्व के निर्माणकार्य हो चुके हैं।

बात समाधान की

आधुनिक काल में समस्याओं से निपटने का सबसे प्रमुख शस्त्र है, ज्ञान। हम नदियों के प्रति श्रद्धा और भक्ति का भाव रखते हैं किंतु नदी के विज्ञान और इलाके के भूगोल से अनभिज्ञ रहते हैं। एक लोकतांत्रिक देश में भूमि और नदियां सार्वजनिक संपत्ति हैं, जिनमें मानवीय हस्तक्षेप को रोकने का एकमात्र तरीका है ज्ञान और जागरूकता। हमें नदियों के प्रति जागरूकता का स्तर इतना बढ़ाना होगा कि बाढ़ग्रस्त मैदानों पर निर्माण कार्य होता दिखे तो पुलिस या न्यायालय से पहले आमजन उस पर आपत्ति दर्ज करा दें। हमें नदी, जल और भूविज्ञान के प्रति आमजन की समझ को बढ़ाना होगा और इन संसाधनों के प्रबंधन और नियंत्रण में जनभागीदारी को बढ़ाना होगा। दूसरी ओर पर्यावरण हितैषी की पैकेजिंग में सामने आ रहे विभिन्न नवाचारों को भी अच्छी तरह से परखने के बाद ही अपनाना होगा। हमारे पर्यावरण वैज्ञानिकों का श्रम प्रयोगशालाओं तक सीमित ना रहे वरन प्रयोगशालाओं और शोधपत्रों से बाहर आकर उस ज्ञान का व्यवहारिक अनुप्रयोग हो तो हम एक जलसमृद्ध, खाद्यान्न सम्पन्न समाज विकसित कर सकते हैं।

संपर्क
गंगा नदी घाटी प्रबंधन एवं अध्ययन केंद्र (cGanga)
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर 208016, उत्तर प्रदेश, भारत
Email: info@cganga.org, Website: www.cganga.org, Contact us: +91 512 259 7792
©cGanga, 2023